International Journal of Academic Research and Development
ISSN: 2455-4197, Impact Factor: RJIF 5.22
www.academicsjournal.com
Volume 2; Issue 3; May 2017; Page No. 65-67

राजस्थान में वर्षा जलसंग्रहण एवं व्यवस्था : बावड़ी

भारत आर्य

शोधार्थी, इतिहास विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर, राजस्थान, भारत।

प्रस्तावना

जल प्रकृति की अलभ्य, अनुपम और एक ऐसी संजीवनी संपदा है, जिसके हर कण में प्राणदायिनी शक्ति है। जल जन–जीवन का मूल आधार है, जहां जल है वहां जीवन है और बिन जल सब निष्प्राण और निश्चेष्ट है। प्रकृति की इस अनुपम धरोहर को सहेज कर रखने का प्रयास मानव में चेतना के संचार के साथ ही प्रारम्भ हो चुका था।

आदिम युग में मानव ने प्राकृत तरीकों से जल का उपभोग किया तथा जब उसने पत्थरों को जोड़कर घर बनाना सीख लिया तो जल संचयन के लिए तालाब, कुएं, और बावड़ियों की संरचना कर उसने जल प्रबन्धन के बेहतर तरीके भी अपनाये। भूगोलवेत्ताओं के अनुसार राजस्थान में जहां आज रेत का समुद्र है, वहां कभी पानी का सागर हुआ करता था। जो कि कालान्तर में सूख गया। विशाल जलराशि का स्थान रेत के अथाह समुद्र ने ले लिया। अब यहां पानी नहीं, सूरज बरसता है, पानी कम और गर्मी अधिक, इन्हीं सब विषम और दुरूह प्राकृतिक परिस्थितियों के कारण ही यहां के स्थानीय निवासियों में वर्षाजल को सहेज कर रखने की प्रवृति विकसित हुई।

राजस्थान में यद्यपि मानसून की हवायें दो तरफ से आती है, किन्तु राजस्थान तक पहुंचते–पहुंचते उनमें आर्द्रता की इतनी मात्रा भी नहीं बचती कि वे राजस्थान की धरती को तृप्त कर सके। वर्षा के इन अमृत कणों को पाने के लिए मरूभूमि के लोगों ने खूब मंथन किया और अपने अनुभवों को व्यवहार में उतारने का पूरा शास्त्र ही विकसित कर लिया। राजस्थान में जल संरक्षण की परम्परागत प्रणालियां स्तरीय है। यहां जल संचय की परम्परा सामाजिक ढांचे से जुड़ी हुई है। जल स्त्रोतों को पूजा जाता है। यहां के लोगों ने पानी के कृत्रिम स्त्रोतों का आविष्कार किया है जिसके आधार पर कठिन जीवन को भी सहज बना दिया है। राजस्थान के अनेक क्षेत्रों में जल महत्व की लोक कथाऐं प्रचलित है। बाणगंगा की उत्पत्ति अर्जुन के तीर मारने से जोड़ते हैं, वहीं भीम द्वारा जमीन में पैर मारकर पानी का फव्वारा निकालने की कथा है।

यहां कुएं–बावड़ी, बंध–तलाई, एनीकट, तालाब, सर, सरोवर, जोहड़, नाड़ी झील, खड़ीन आदि बनाने की प्राचीन परम्परा रही है तथा उसे बड़े जतन के साथ वर्ष भर और उससे भी अधिक समय के लिए उपभोग किया जाता रहा है। बूंद–बूंद कर जलराशि को जमा करने के ये माध्यम माटी के साथ बदलते रहे हैं। ऐसा नहीं कि इनके निर्माण में राजा–महाराजाओं, सेठ–साहूकारों का ही योगदान रहा हो, बल्कि ऐसे उदाहरण भी है. जब लोगों ने किसी अच्छे कार्य की स्मृति, किसी की स्मृति या किसी संकल्प के फलस्वरूप मिलकर अथवा निजी तौर पर इनका निर्माण कराया। कई झील अथवा तालाब तो भील और बनजारों द्वारा निर्मित हैं। राजस्थान के ये जलसंग्रहण स्थल ना केवल जलापूर्ति के स्त्रोत रहे हैं, अपितु वर्तमान में ये पर्यटन की दृष्टि से समृद्ध है। जहां हर वर्ष हजारों की संख्या में पर्यटक आते है – जैसे, जैसलमेर का घड़सीसर, उदयपुर का राजसमन्द व जयसमन्द झील, पुष्कर सरोवर, माउण्ट आबू की नक्की झील, जयपुर में स्थित मावठा सागर, पन्ना मियां की बावड़ी, आभानेरी की चांद बावड़ी, दौसा की भाण्डारेज बावड़ी आदि।

बावड़ी एक परिचय

बावड़ियां सामाजिकता की पर्याय मानी जाती हैं। ये केवल पेयजल की स्त्रोत ही नहीं रही हैं वरन् ये ऐसा सामाजिक केन्द्र भी रही हैं जहां महिलाएं एवं पुरूष दोनों स्नान के साथ–साथ पूजा–अर्चना तथा गपशप करते थे। यहीं पर वैवाहिक सम्बन्ध भी तय किए जाते थे। पुरूष इन बावड़ियों पर चौपड़ और सांप–सीढ़ी का खेल खेलने के साथ–साथ व्यापारिक संविदाएं भी तय करते थे। बावड़ियां अक्सर मन्दिर परिसर या व्यापारिक मार्ग पर अवस्थित होती थी।

राजस्थान में बावड़ी अथवा बाव का तात्पर्य एक विशेश प्रकार के जल स्थापत्य से है जिसमें एक गहरा कुआं अथवा एक बड़ा कुण्ड होता है और पानी खींच कर निकालने की व्यवस्था के साथ ही पानी की सतह तक जाने के लिए सीढ़ियां भी बनी होती हैं, जो कई सतहों और मंजिलों में बंटी होती है। इन पर अलंकृत द्वार सुन्दर तोरण तथा देवी–देवताओं की प्रतिमाएं बनाई जाती हैं। इनके प्रवेश से मध्य भाग तक ईंटों अथवा पत्थरों का निर्माण कार्य होता है। इनमें आगे आंगननुमा भाग होता है जिसके ठीक नीचे जल भरा हुआ होता है। आंगन से प्रथम तल तक सीढ़ियों, स्तम्भों तथा मेहराबों का निर्माण किया हुआ होता है। एक से अधिक मंजिल में निर्मित कुण्ड, बावड़ियों में दरवाजे, सीढ़ियों की दीवारें तथा आलिये बने होते है,

जिनमें बेलबूंटों, झरोखों, मेहराबों तथा जल–देवताओं का अंकन होता है। जल देवताओं में अधिकांशतः कश्यप, मकर, भूदेवी, वराह, गंगा, विष्णु और दशावतार का चित्रण किया जाता है।

प्राचीन शिलालेखों में बावड़ी के संस्कृत रूप वापी के उल्लेख तो प्रथम शती से मिलने लगते हैं पर संभवतः शास्त्रीय स्वरूप बाद में ही निश्चित हुआ होगा। यह निश्चित है कि प्रथम शती में बावड़ी विस्तार से नहीं बनाई जाती थी। इनका विकास धीरे–धीरे हुआ। वास्तुशास्त्र के प्रतिष्ठित ग्रन्थों में उत्तर के समरांगण सुत्राधार, अपराजित पृच्छा, राजवल्लभ वास्तुसार आदि तथा दक्षिण परम्परा के मानसार, मयमत, विश्वकर्मा और वास्तुशास्त्र से वापी एवं उनके निर्माण सम्बन्धी जानकारी मिलती है। जिनमें से अपराजित पृच्छा एवं विश्वकर्मा प्रमुख हैं।

राजस्थान की प्रसिद्ध बावड़ियां

राजस्थान के 33 जिलों में 3029 से अधिक बावड़ियां एवं कुण्ड हैं। बावड़ियों के निर्माण की प्रकृति एवं डिजाइन उस जगह की प्राकृति स्थितियों, वर्षा की मात्रा, भूमिगत जल स्तर, मिट्टी के प्रकार, निर्माण करने वाले की आर्थिक स्थिति आदि पर निर्भर करती थी। शुरूआती युग में ये साधारण संरचनाएं थी, किन्तु समय के साथ–साथ ये महीन कलात्मक उत्कीर्ण से युक्त मूर्तियों व कलाकृतियों की साज–सज्जा के साथ विकसित होकर मनभावन एवं जटिल होती गई। ये बावड़ियां ना केवल धार्मिक अनुष्ठान से ही जुड़ी हुई थी, अपितु ये मुक्ति, आत्माओं से सुरक्षा और उर्वरता को बढ़ावा देने का स्थान मानी जाती थी।

1. चांद बावड़ी – आभानेरी दौसा

दौसा जिले की बांदीकुई तहसील के आभानेरी गांव में लगभग 8 वीं शताब्दी में बनी भव्य डिजाइन और विशाल आकार की ये बावड़ी गहराई में लगभग 19.5 मीटर की है। 13 मंजिल की इस बावड़ी में तकरीबन 3500 सीढ़ियां हैं। किवदन्ती है कि इसका निर्माण आभानेरी के संस्थापक राजा चन्द्र या चांद ने कराया था। अद्भुत कलात्मकता की प्रतीक वर्गाकार चांद बावड़ी के तीन ओर आकर्षक सीढ़ियां एवं विश्राम घाट बने हुए हैं। उत्तरी ओर की चौथी साईड में स्तम्भ युक्त बहु मंजिलें गलियारे बने हुए हैं। इस बावड़ी में राजा के लिए नृत्य कक्ष तथा गुप्त सुरंग बनी हुई है। यह बावड़ी एक ऊंची दीवार से घीरी है। जिसमें उत्तर दिशा में एक प्रवेश द्वार है। इसकी परिधी में चारों तरफ स्तम्भ युक्त बरामदे बने हुए हैं। यहां एक बहुत छोटा सा कमरा भी है, जिसे ''अंधेरी उजाला'' के नाम से जाना जाता है। बावड़ी के सबसे नीचे दो ताखों में गणेश एवं महिसासुर मर्दिनी की भव्य प्रतिमाएं हैं। जो इसकी खूबसूरती में चार चांद लगाती हैं। इस बावड़ी के नीचे एक लम्बी सूरंग है तथा माना जाता है कि भण्डारेज स्थित बड़ी बावड़ी से होती हुई आलुन्दा गांव के कुण्ड तक जाती है।

2. रानीजी की बावड़ी – बूंदी

बूंदी में तकरीबन 71 छोटी–बड़ी बावड़ियां हैं। बूंदी की सुन्दरत्तम रानीजी की बावड़ी की गणना ऐशिया की सर्वश्रेष्ठ बावड़ियों में की जाती है। इसमें लगे सर्पाकार तोरणों की कलात्मक पच्चीकारी अत्यन्त आकर्षक बावड़ी की दिवारों में विष्णु के अवतार मत्स्य, कच्छप, वराह, नृसिंह, वामन और इन्द्र, सूर्य, शिव, पार्वती और गजलक्ष्मी आदि देवी–देवताओं की मूर्तियां लगी है। इस कलात्मक बावड़ी में प्रवेश के लिए तीन दरवाजे हैं। बावड़ी की गहराई लगभग 40 मीटर है। इसका निर्माण राव राजा अनिरूद्ध की रानी राजमाता नाथावती ने 1699 ईस्वी में अपने पुत्र बुधसिंह के शासनकाल में करवाया था। बावड़ी के अन्दर जाने के लिए लगभग 150 सीढ़ियां है। इसकी स्थापत्य कला बहुत ही दर्शनीय व आकर्षक है। यह मुगल एवं राजपूत स्थापत्य कला का मिश्रण हैं।

3. नीमराणा की बावड़ी – अलवर

इसका निर्माण राजा टोडरमल ने 18 वीं सदी में करवाया था। यह नो मंजिला है। इसकी लम्बाई 250 फुट व चौड़ाई 80 फुट है। इसमें एकसाथ एक छोटी सैनिक टुकड़ी को छुपाया जा सकता था। इसके नीचले भाग में तापमान ऊपर के तापमान से 19 डिग्री कम हो जाता है और इसमें दिन में प्रकाश की तीव्रता का स्तर गर्मियों के मध्य दिन में 300 लक्स बना रहता है।

4. पन्ना मीना की बावड़ी, आमेर जयपुर

17 वीं सदी की अत्यंत आकर्षक इस बावड़ी के एक ओर जयगढ़ दुर्ग व दूसरी ओर पहाड़ों की नैसर्गिक सुंदरता है। यह अपनी अद्भुत आकार की सीढ़ियों, अष्टभुजा किनारों और बरामदों के लिए विख्यात है। चांद बावड़ी तथा हाड़ी रानी की बावड़ी के समान इसमें भी तीन तरफ सीढ़ियां हैं। इसके चारों किनारों पर छोटी–छोटी छतरियां और लघु देवालय इससे मनोहारी रूप प्रदान करते हैं।

5. हाड़ी रानी की बावड़ी, टोडारायसिंह, टोंक

बेजोड़ स्थापत्य कला के इस नमुने का निर्माण बुंदी की राजकुमारी हाड़ी रानी ने लगभग 16 वीं शताब्दी में करवाया था। जिसका विवाह सोलंकी शासक से हुआ था। इसके एक ओर बने अनूठे विश्राम कक्ष अपने आकार, ऊंचाई व ठण्डक के कारण जाने जाते हैं।

6. रंग महल, सूरतगढ़ की बावड़ी

रंग महल किसी समय यौद्येय गणराज्य की राजधानी था। पहले सिकन्दर के आक्रमण से हानि उठानी पड़ी। उसके बाद हूण आक्रमण से यह पूरी तरह से नष्ट हो गया। उत्खनन में यहां से एक प्राचीन बावड़ी प्राप्त हुई है। जिसमें 2 फुट लम्बी तथा 2 फुट चौड़ी ईंटें लगी हैं।

7. भिकाजी की बावड़ी, अजमेर

अजमेर से 18 किमी. दूर जयपुर रोड़ पर स्थित यह बावड़ी भिकाजी की बावड़ी के नाम से जानी जाती है। इसमें संगमरमर पर उत्कीर्ण हिजरी 1024 (1615 ईस्वी) का फारसी लेख उत्कीर्ण है। अभिलेख फलक पर उकडू बैठा हुआ हाथी, अंकुश एवं त्रिशूल बना है।

8. चमना बावड़ी, शाहपुरा, भीलवाड़ा

वि.सं. 1793 को चमना नामक गणिका उदयपुर से शाहपुरा (भीलवाड़ा) आयी। राजा उम्मेद सिंह प्रथम ने उसे अपनी चाकरी में रखा। वह अपना धन सत्कर्यों में लगाती थी। महाराजा उम्मेद सिंह ने चमना को एक लारख रूपये दिये जिससे चमना ने भव्य बावड़ी का निर्माण करवाया। बावड़ी के दोनों ओर गोवर्धन नाथजी तथा श्रीजी का मन्दिर स्थित है।

9. बड़ी बावड़ी, दौसा

यह दौसा जिले में स्थित है, जो कि 5 मंजिला है। इसका निर्माण वि.सं. 1789 (1732 ई.) में कुम्भाणी शासक दीपसिंह व दौलतसिंह ने करवाया था। इसमें तल तक जाने के लिए सीढ़ियां बनी हुई हैं एवं सीढ़ियों के ऊपर बरामदे बने हुए हैं। प्रवेश द्वार तथा पीछे की तरफ शिखर युक्त आकर्षक गुम्बद बने हुए है, जो परम्परागत हिन्दू स्थापत्य कला का अप्रतिम उदाहरण है। पीछे को ऊपरी मंजिल पर अंधेरी उजाला बनी हुई है। यह बावड़ी एक गुप्त सुरंग द्वारा भांडारेज के गढ़ से जुड़ी हुई है।

10. तापी बावड़ी, जोधपुर

जोधपुर के भीमजी के मौहल्ले में स्थित इस बावड़ी का निर्माण 1675 ईस्वी में तापोजी तेजावत ने करवाया था। यह जोधपुर की सबसे बड़ी बावड़ी है। जो कि छः खण्डों में विभाजित है।

11. दूध बावड़ी, सिरोही

यह सिरोही जिले के माऊण्ट आबू में अर्बुदा देवी के मन्दिर की तलहटी मेकं स्थित है। जिसके बारे में कहा जाता है कि

यह प्राचीन काल में दूध से भरी रहती थी, जिसका उपयोग ऋषि–मुनि करते थे। किवदन्ती यह भी है कि इसका पानी दूध के समान था।

परम्परागत जल स्रोतों की वर्तमान में प्रासंगिकता

जल संचय और संरक्षण प्रबन्ध हमारे यहां सदियों पुराना है। राजस्थान में खड़ीन, कुंड, नाड़ी, तो महाराष्ट्र में बंधारा और ताल, तमिलनाडु में इरी, हिमाचल प्रदेश में कुहल, जम्मू में पोखर, केरल में सुरंगम् और कर्नाटक में कट्टा आदि जल प्रबन्धन के प्राचीन स्रोत थे। ये सभी सम्बन्धित स्थान की पारिस्थितिकी और संस्कृति की अनुरूपता के आधार पर हैं। पर्यावरण से तालमेल रखते हुए स्थानीय जरूरतों को पूरा किया है। आधुनिक व्यवस्थाएं पर्यावरण का दोहन कर रही हैं। भारत में 80 प्रतिशत बरसात मानसून के तीन महिनों में ही हो जाती है तथा ज्यादातर पानी नदियों के माध्यम से बह जाता है। जरूरत इस बात की है कि वर्षा के पानी को स्थानीय जरूरतों और भौगोलिक स्थितियों के हिसाब से संग्रहित किया जाना चाहिये।

जल संग्रहण से भू–जल का भण्डारण भी हो जाता हैं। जल संचय की पारम्परिक प्रणालियों से लोगों की घरेलु और सिंचाई सम्बन्धी जरूरतें पूरी की जा सकती हैं। पारम्परिक प्रणालियों के सामुदायिक जल प्रबन्धन द्वारा हर व्यक्ति की न्यूनत्तम आवश्यकता पूरी हो सकती है। देश–प्रदेश के बहुत बड़े हिस्से में आधुनिक प्रणाली भारी लागत की वजह से नहीं पहुंच पा रही है वहां लोग पीने के जल व सिंचाई के लिए परम्परागत जल प्रबंधन पर निर्भर है।

पारम्परिक प्रणालियों में सस्ती, आसान तकनीकी का प्रयोग होता था, जिसे स्थानीय लोग भी आसानी से बनाए रख सकते थे। पानी आर्थिक विकास का बड़ा आधार है। जल प्रबन्धन प्रणालियों का यदि व्यावहारिक समता और समुदाय आधारित विकास करना है तो जल संग्रहण की परम्परागत प्रणालियों का निर्माण और व्यवस्था आज भी प्रासंगिक है। वर्तमान में भी राज्य सरकार द्वारा निरन्तर प्रयास किये जा रहे है। निरन्तर गिरते भू–जल स्तर की रोकथाम एवं जल की बढ़ती मांग के मद्देनजर सरकार अनेक कार्य कर रही है। वर्षा जल के संरक्षण के लिए एनिकट बनाये जा रहे है तो जल उपयोग की दक्षता में वृद्धि के लिए ड्रिप व स्प्रिंकलर सिंचाई पद्धति को बढ़ावा दिया जा रहा है। जल स्वावलम्बन योजना इसी का एक भाग है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. डॉ. हुकमचन्द जैन, राजस्थान इतिहास एवं संस्कृति एनसाइक्लोपीडिया, जैन प्रकाशन मन्दिर, चौड़ा रास्ता, जयपुर – 2013
2. गोपीनपाथ शर्मा, दि सोशल लाइफ इन मेडिवल राजस्थान।
3. मौहणौत नैणसी, नैणसी री ख्यात।
4. कर्नल जम्स टॉड, अनल्स एण्ड एण्टिक्वीटीज ऑफ राजस्थान।
5. डॉ. जयसिंह नीरज, राजस्थान की सांस्कृतिक परम्परा।
6. सुजस।